कक्षा संचालन : चुनौतियाँ और चुनाव

मीनू पालीवाल

बच्चों के सीखने का वातावरण भय और दण्ड पर आधारित नहीं होना चाहिए। लेकिन बिना भय और दण्ड के बच्चे शिक्षक की बात को समझ सकें, और कक्षा में सीखने का माहौल निर्मित करने में सहयोग दे सकें ऐसा करने में बहुत सी मुश्किलें आती हैं। लेखिका बताती हैं कि किस तरह धीरज और संयम के साथ शिक्षक को बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित करानी चाहिए। लेखिका यह अनुभव भी साझा करती हैं कि रोचक खेलों और अन्य नवाचारों के सहारे कक्षा संचालन को कैसे ज़्यादा बेहतर बनाया जा सकता है। सं.

हमारी संस्था अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में जो भी नए साथी आते हैं, वे प्रायः कक्षा संचालन में परेशानी महसूस करते हैं। शुरुआत में, फ़ेलोशिप के दौरान मेरी सबसे बड़ी चुनौती भी कक्षा संचालन ही थी।

कक्षा सुचारु रूप से चल सके, इसके लिए स्कूलों में डाँटकर, पिटाई करके, बच्चों को शान्त करवाना प्रचलित तरीक़ा है। हम सभी जानते हैं कि ये तरीक़े ठीक नहीं हैं, लेकिन फिर भी बच्चों के साथ काम करते हुए इन तरीक़ों को उपयोग में ले ही लेते हैं। ऐसा क्यों है? मुझे लगता है, शायद इसका एक कारण कक्षा में शिक्षक की परिस्थितियाँ होती है। कई कक्षाओं में, स्कूलों में, बच्चे बहुत ज़्यादा होते हैं और उन बच्चों में स्तर के अनुसार भी फ़र्क़ होता है। पढ़ाते समय, जो बच्चे पाठ से जुड़ रहे होते हैं, वे ख़ुद को मशग़ूल रख पाते हैं, जो नहीं समझ रहे होते हैं, वे कुछ और करने लगते हैं। इससे कक्षा की प्रक्रिया बाधित हो सकती है। कक्षा में ऐसी कई और भी परिस्थितियाँ हो सकती हैं। मसलन, जो बच्चे पढ़ाई जाने वाली विषय-वस्तु को समझ लेते हैं वे शिक्षक से कहते हैं कि आगे पढ़ाइए, जबकि जो बच्चे जुड़ नहीं पाते वे कुछ और करने लगते हैं। कुछ बच्चे कक्षा में उछल-कूद चाहते हैं। फिर शिक्षक को सिलेबस पूरा करने की चिन्ता भी होती है, क्योंकि परीक्षाओं का दबाव होता है। इन सब परिस्थितियों के बीच जब शिक्षक पढ़ाते हैं और कक्षा में बच्चे शोर करते हैं, बात बिलकुल नहीं सुनते, उस वक़्त यह सोच पाना, कि मारने-डाँटने के अलावा इस स्थिति से पार पाने का क्या वैकल्पिक तरीक़ा हो सकता है, आसान काम नहीं है। इसलिए शिक्षक कई बार न चाहते हुए भी ग़ुस्सा कर बैठते हैं।

एक कारण सोच का भी है। कई वयस्कों का अनुभव है कि उनके समय में बच्चों को स्कूलों में मार पड़ती थी। हालाँकि, उनमें से कुछ लोगों का अनुभव यह भी है कि जो शिक्षक सिखाने के लिए मारते थे, वे उन्हें प्यार भी करते थे। इस तरह के भी ख़याल व्यक्त किए जाते हैं कि अच्छा हुआ, उन सर ने हमें मारकर, डाँटकर सिखा दिया वरना मैं आज यहाँ तक नहीं पहुँच पाता। भई, उस समय तो हम बच्चे थे, हमें समझ कम थी। इस तरह के विचार मारने-पीटने को

एक जायज़ रास्ता स्वीकार लेने के लिए समर्थन देते हैं।

बच्चों को पीटकर, डाँटकर शान्त कराना काफ़ी आसान और तुरन्त नतीजा देने वाला रास्ता है। फिर सवाल है कि वैकल्पिक तरीक़े क्यों तलाशें?

हम एक लोकतांत्रिक समाज बनाना चाहते हैं। ऐसा समाज जिसके सदस्य निर्भीक हों, उनमें ख़ुद निर्णय लेने की क्षमता हो, वे सही-ग़लत को तर्कों के आधार पर पता कर सकें। ऐसे सदस्य बन पाएँ, इसके लिए ज़रूरी है कि बच्चों के सीखने का, माने स्कूल का और कक्षा का, वातावरण भय और दण्ड पर आधारित न होकर लोकतांत्रिक हो।

लेकिन लोकतांत्रिक माहौल बन पाए, इसके लिए कक्षा संचालन के वैकल्पिक तरीक़े ढूँढ़ पाना और फिर उन्हें कक्षा में लागू भी कर पाना बहुत आसान नहीं है। फ़ेलोशिप के दौरान, बच्चों के साथ कक्षा में काम करते हुए, मुझे अपने ऊपर काफ़ी नियंत्रण रखना पड़ा जिसमें बहुत सायास प्रयास की ज़रूरत पड़ी। शायद इसलिए, क्योंकि मुझे भी इस समाज में रहते हुए यह अनुभव तो हुए ही कि भय से चीज़ें होती दिखती हैं (और बच्चों को भी यह अहसास कई बार हुआ होगा)।

ख़ैर, कक्षा और स्कूल में काम करते हुए कई बार किसी घटना या किसी बच्चे को नज़रअन्दाज़ किया। कई बार बहुत ग़ुस्सा आया और बच्चों पर ग़ुस्सा भी किया। पहले वर्ष में कभी-कभी डाँटा ज़रूर, पर दूसरे वर्ष में इसकी ज़रूरत कुछ कम ज़रूर हुई पर ख़त्म नहीं। कक्षा में ऐसे ढेरों अनुभव हुए जहाँ मैंने बच्चों से बातचीत में, उनके साथ कक्षा का काम करने में, चुनौती महसूस की। एक वाक़या कुछ ऐसा था :

बच्चे प्रार्थना के बाद कक्षा में पहुँचे थे। मैं प्रधान अध्यापिका से मिलकर कक्षा में पहुँची। बच्चे कक्षा में इधर-उधर दौड़ रहे थे और शोर मचा रहे थे। मैंने दो-तीन बार कहा, अरे बैठ जाओ! अब कक्षा का समय हो गया है। मैंने लगभग चिल्लाते हुए कहा, चुप हो जाओ सब! कक्षा 2 की एक बच्ची पलटी और बोली, तू चुप! जैसे ही उसने ये कहा, कक्षा में सन्नाटा छा गया। मैं भी कुछ समय के लिए स्तब्ध रह गई। मैं उस वक़्त कक्षा से तुरन्त बाहर आ गई। थोड़ी देर बाद मैं फिर कक्षा में वापस आ गई और रोज़ की तरह पढ़ाने का काम शुरू किया।

मैं अब इस घटना को याद करते हुए सोचती हूँ तो बहुत-से सवाल मेरे ज़ेहन में उमड़ते हैं। मसलन, उस बच्ची के बोलने पर सभी बच्चे शान्त क्यों हो गए? क्या उन्हें लगा अब इस बच्ची को मार पड़ेगी या उन्हें भी उस बच्ची का ऐसे बात करना सही नहीं लगा? क्या मैंने सचमुच ही बहुत ख़राब तरीक़े से बच्चों से शान्त हो जाने को कहा था? या, क्या वह बच्ची मुझे अपना दोस्त समझ रही थी, इसलिए उसे लगा कि वह ऐसे बोल सकती है? या फिर, क्या उसके घर पर इस तरह से बातचीत होती है?

लेकिन मुझे यह भी लगता है कि यदि मैं उस वक़्त उस बच्ची को डाँटती या हाथ उठाती, तो वह बच्ची कक्षा से यह सीख लेकर जाती कि 'अपने से कमज़ोर व्यक्ति से ख़राब ढंग से, चिल्लाकर बात की जा सकती है या उसपर हाथ उठाया जा सकता है', जैसा हम दुनिया में देखते भी हैं।

हालाँकि, ऐसे कई अनुभवों पर सोचते वक़्त मुझे महसूस हुआ कि कक्षा में बच्चों को भय से चुप करवा देना (मार-पीट, डाँटना) आसान होता है। मुश्किल होता है नए रास्ते तलाशना। ऐसे रास्ते, जो बच्चों को भी यह अहसास कराएँ कि कक्षा में उनकी भी एक सक्रिय और ज़िम्मेदारी की भूमिका है। नए रास्तों की तलाश के लिए मैंने अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन और कुछ सरकारी स्कूलों के शिक्षक सहकर्मियों से सलाह-मशविरा किया। इण्टरनेट पर इससे

सम्बन्धित वीडियो तलाशे। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के स्कूलों के अवलोकन से भी मुझे बहुत फ़ायदा हुआ। साथ ही कुछ किताबों (*एक शिक्षक* सिल्विया एस्टन वार्नर, *मेरी ग्रामीण शाला की डायरी* जूलिया वेबर, *मेरी स्कूल डायरी* रेखा चमोली) ने भी मेरी मदद की।

इन्हीं वजहों से यह सम्भव हो सका कि मैं 'तू चुप' बोलने वाली उस बच्ची के साथ और ऐसी अन्य परस्थितियों में काम कर पाई।



चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

उस दिन तो मैंने उस बच्ची से इस बारे में कोई बात नहीं की। अगले दिन कक्षा शुरू करने से पहले मैंने उस बच्ची को बुलाया। उससे इस बारे में बातचीत की। अपने चिल्लाकर बोलने का कारण उससे साझा करते हुए मैंने कहा, "मुझे इतनी ज़ोर से इसलिए बोलना पड़ा क्योंकि 2-3 बार बोलने के बाद भी किसी ने मेरी आवाज़ नहीं सुनी।" मैंने उससे पूछा, "क्या वह कक्षा संचालन में मेरी मदद करेगी?" उसने 'हाँ' कहा। हम कक्षा में गए। वह ख़ुद ही कहीं से एक लम्बी लकड़ी ले आई और कुछ बच्चों को कहने लगी, "शोर मत मचाओ!" उसने 1-2 बच्चों को मारा भी। मैंने देखा, वह ज़ोर से नहीं मार रही थी। फिर भी कोई शान्त नहीं हो रहा था। मैंने भी कुछ नहीं कहा। थोड़ी देर कोशिश करने के बाद वह बच्ची मेरे पास आई और बोली, "मैडम! कोई सुन नहीं रहा है।" मैंने कहा, "जाओ, थोड़ी और कोशिश करो।" एक बच्चे ने उससे लकड़ी ली और उसे ही मारने लगा। अब मैंने बच्चों से कहा कि वे शान्त हो जाएँ। हमें कक्षा की शुरुआत करनी है। बच्चे व्यवस्थित हो गए। रोज़ की तरह कक्षा ख़त्म हुई। खाने की छुट्टी में मैंने उस बच्ची को बुलाया और पूछा, "क्या हुआ? आज कक्षा में कैसा लगा?" मैंने उससे यह प्रश्न भी किया कि यदि कक्षा इस तरह अव्यवस्थित रहेगी तो हम पढ़ाई कैसे करेंगे? वह बच्ची बोली, "मैडम! कोई सुन ही नहीं रहा था।" मैंने कहा, "कोई बात नहीं, हम थोड़ी और कोशिश करेंगे।"

आपने देखा, बच्ची ने डण्डा लाकर कक्षा संचालन करने की कोशिश की। बच्चों में यह धारणा धीरे-धीरे घर करने लगती है कि मारना या डाँटना सही तरीक़ा है। कुछ बच्चे ही दूसरे बच्चों को मारने या डाँटने की सलाह देते हैं। इसका एक कारण तो यह हो सकता है कि बच्चे समाज में व्याप्त जो व्यवहार देखते हैं, उसी से सीखते हैं। यह हम उनकी दूसरी धारणाओं में भी देख सकते हैं। उदाहरण के लिए, खाना बनाने का काम तो औरतों का ही है।

कक्षा संचालन को बेहतर बनाना सीखते हुए मैंने कुछ और तरीक़े आज़माए, जो कारगर साबित हुए। ये तरीक़े इस प्रकार हैं :

तरीक़ा 1

आप कोई कविता गाएँ जिसमें बच्चों का नाम लेने की जगह हो। मसलन, 'चिट्ठी आई

चिट्ठी आई, दूर देश से चिट्ठी आई, रश्मि के लिए चिट्ठी आई'। जो बच्चा कक्षा में अच्छे-से बैठा है, उसका नाम कविता में लीजिए। इससे बच्चों का ध्यानाकर्षण आपकी तरफ़ होगा और बच्चे आपसे कविता में उनका नाम लेने के लिए कहेंगे। आप सिर्फ़ उन्हीं बच्चों का नाम कविता में लीजिए जो कक्षा में ठीक से बैठे हैं। सारे बच्चे धीरे-धीरे व्यवस्थित होने लगते हैं।

तरीक़ा 2

बच्चों के साथ मिलकर कक्षा के लिए नियम बनाना। जब आप ये काम करना शुरू करेंगे तो आप पाएँगे कि कैसा बर्ताव कक्षा में सही है, यह बच्चे पहले से ही जानते हैं। आपको लगेगा, जब इन बच्चों को पहले से पता है कि कक्षा में कौन-सा व्यवहार उचित है कौन-सा नहीं, तो वे कक्षा में ग़लत बर्ताव करते ही क्यों हैं? इसे समझने के लिए एक और उदाहरण आपसे साझा कर रही हूँ। मैं एक दिन बच्चों के साथ एक कहानी पर काम कर रही थी जिसमें एक बच्चा इसपर सोच रहा होता है कि चींटे को मारे या नहीं। मैंने बच्चों से पूछा, "क्या करना चाहिए इस बच्चे को?" सब बच्चे बोले कि चींटे को नहीं मारना चाहिए। अगले दिन कक्षा में ही एक बच्चे के पास से एक चींटा गुज़र रहा था। इस बच्चे ने उसे हाथ से मार दिया। कितना अजीब लगता है कि बच्चे ने चींटे को मार डाला। कहानी के दौरान बच्चे सचेत होकर सोच रहे थे इसीलिए वे, सही क्या है, इसपर सोच पाए। वे सोच सके कि चींटे को मारना सही नहीं है। जबकि चींटा जब बाजू से गुज़र रहा था, तब बच्चे ने बिना सोचे ही चींटे को मार डाला। इसी प्रकार, जब बच्चे नियम बना रहे होते हैं तो वे सचेत होते हैं। उन्हें इस बात का अहसास होता है कि कक्षा में कौन-सा व्यवहार उपयुक्त होता है। इन नियमों से कक्षा थोड़ी व्यवस्थित हो जाती है। हालाँकि, बच्चों का ध्यान बार-बार इनकी तरफ़ दिलवाना होता है और शिक्षक को भी इन्हीं नियमों के अनुसार काम करना होता है। बार-बार नियमों की तरफ़ ध्यान दिलाना, बातचीत करना, इसलिए भी ज़रूरी है क्योंकि हम बच्चों में आत्म-नियंत्रण विकसित करना चाहते हैं।

तरीक़ा 3

अलग-अलग पैटर्न में तालियाँ बजाना या कहना, कि चलो एक खेल खेलते हैं, भी एक कारगर तरीक़ा है। ये बहुत अजीब है कि 'खेल' शब्द कक्षा में शोर के बावजूद बहुत-से बच्चे सुन लेते हैं। ऐसा ही कई बार तब होता है जब कोई बच्चा कक्षा में रोने लगता है, सभी बच्चे चुप हो जाते हैं। इससे शायद ये निष्कर्ष निकलता है कि बच्चे अनायास ये निर्णय लेते हैं कि किस आवाज़ पर ध्यान देना है, किसपर नहीं। कक्षा 1-2 की पढ़ाई में ऐसी गतिविधियाँ हों जिनमें बच्चों को अपनी जगह से उठकर घूमने-फिरने को मिले। उदाहरण के लिए, ज़मीन पर वर्ण, अल्फ़ाबेट्स या संख्या लिखना और बच्चों से बोली हुई संख्या या वर्ण पर जाने को कहना।

तरीक़ा 4

एक अनुभवी शिक्षक ने मुझसे एक और तरीक़ा साझा किया। उन्होंने कहा कि 1 से 5 तक गिनती गिनो और बच्चों को कहो कि 5 बोलने से पहले सबको बैठ जाना है। मुझे इस तरीक़े पर बहुत संशय था कि गिनती गिनने से बच्चे ऐसे कैसे व्यवस्थित हो जाएँगे। मैंने 15-20 दिनों तक इस तरीक़े को इस्तेमाल नहीं किया। एक दिन थक-हार कर मैंने यह तरीक़ा इस्तेमाल किया। बच्चे सही में बैठ गए। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि आख़िर इस तरीक़े ने काम कैसे किया? शायद यह बच्चों को एक खेल जैसा लगा। एक और बात समझ आई कि नए-नए तरीक़े अपनाकर देखने चाहिए।

तरीक़ा 5

कक्षा में जब भी ब्लैकबोर्ड पर लिखने के लिए किसी बच्चे को बुलाना होता, सब बच्चे शोर मचाने लगते कि मैं जाऊँगा, मैं जाऊँगा। कहानी सुनाने के दौरान बच्चे एक साथ जवाब

देने लगते थे। इस परेशानी को हल करने के लिए मैंने कक्षा का काम शुरू करने से पहले ही बच्चों को एक-एक पर्ची उठाने को कहा। इस हर एक पर्ची के अन्दर एक संख्या लिखी होती थी। अब जब ब्लैकबोर्ड पर किसी बच्चे को बुलाना होता या कहानी के दौरान बातचीत करनी होती, तो चिट पर लिखी संख्या के अनुसार बच्चे बोलते। इसके अलावा, हाथ उठाना और पूछे जाने पर ही बोलना, ये तरीक़े भी इस्तेमाल किए। एक और तरीक़ा जो बच्चे खेल में यह तय करने के लिए अपनाते हैं कि दाम कौन देगा, वह भी मैंने कक्षा में इस्तेमाल किया। यह तरीक़ा है– वे कोई एक गीत गाते हैं, जैसे अक्कड़-बक्कड़ बम्बे बो और साथ-साथ जितने खिलाड़ी हैं, उनकी तरफ़ इशारा करते जाते हैं। कविता ख़त्म होने पर जिस खिलाड़ी की तरफ़ इशारा हो रहा होता है, उसे दाम देना होता है। यही मैंने कक्षा में भी किया। एक बार कॉपी चेक करते वक़्त कुछ बच्चे आपस में झगड़ने लगे कि मेरी पहले चेक होगी, मेरी पहले चेक होगी। थोड़ी देर में बच्चों ने अक्कड़-बक्कड़ कविता बोलकर निर्णय कर लिया कि कौन पहले कॉपी चेक कराएगा।



चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

कक्षा के अन्य पहलू

बेहतर कक्षा संचालन सिर्फ़ शिक्षक पर निर्भर नहीं करता। इसे और कोणों से भी देखने की ज़रूरत है। कक्षा में बच्चों की संख्या, कमरे की बनावट, समाज में बच्चे को लेकर नज़रिया, कक्षा में हो रही गतिविधियाँ, आदि भी कक्षा संचालन को प्रभावित करती हैं।

अकसर बच्चों के प्रति यह नज़रिया होता है कि उन्हें कुछ नहीं आता, और यदि उन्हें कुछ सिखाना है तो डाँटना या मारना ज़रूरी है। पूरे समाज में ही यह नज़रिया व्याप्त है। यह भी कि, स्कूल का मतलब है अनुशासन सीखना, और अनुशासन का मतलब है दिए गए निर्देशों का अनुसरण करना, शोर नहीं करना और चुपचाप बैठकर काम करते रहना। लेकिन सीखने-सिखाने में बातचीत करना, प्रश्न करना भी ज़रूरी है, इसकी समझ होना और तब इसके लिए कक्षा में जगह बना पाना भी कक्षा संचालन के लिए अहम है। बच्चे भी यह समझ पाएँगे कि किसी काम के लिए शोर नहीं, बातचीत ज़रूरी होती है। यह अहसास शुरुआती कक्षाओं से ही बच्चों को होने लगे तो बेहतर है, साथ ही, हम बच्चों को शुरुआत से ही यह महसूस करने में मदद भी कर पाएँ कि जिस तरह शिक्षक की ज़िम्मेदारी है कि वे उनको सिखाएँ, वैसे ही सीखना बच्चों की भी ज़िम्मेदारी है।

कक्षा संचालन पर काम करना बहुत ही संयम और समझ की माँग करता है। नए तरीक़ों को काम में लेने के बावजूद कई बार हम उलझ जाते थे। बार-बार बच्चों को समझाना पड़ता था और कभी-कभी मैं परेशान भी हो जाती। बार-बार बच्चों से यह कहने के बावजूद, कि देखो मेरी कुर्सी से थोड़ा दूरी रखकर एक लाइन में आओ, बच्चे पूरी तरह मुझे घेर लेते। शायद उनको जल्दी रहती हो या कॉपी चेक



चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

करवाने की उत्सुकता होती हो। एक दिन मैंने एक लाइन खींची और जो बच्चा पहले कॉपी चेक करवाने आया, उससे कहा कि अब जो भी बच्चा आए, उसको इस लाइन के पीछे खड़ा रहने को बोलना। एक बच्ची लाइन में 2-3 बच्चों के खड़े होने के बावजूद सीधे मुझे अपनी कॉपी देने लगी। मैंने पूछा कि ये लाइन नहीं दिख रही क्या? अब बच्चे भी दूसरे बच्चों को मेरे ही अन्दाज़ (कटाक्ष) में वही बात कहने लगे। ये देखकर मुझे भी हँसी आ गई।

इस उदाहरण से, मैं यह भी साझा करना चाहती हूँ कि हमेशा बच्चे शिक्षक को तंग करने या परेशान करने के लिए उनकी बात नहीं मानते, ऐसा नहीं है। उनकी कई जायज़ इच्छाएँ भी होती हैं, जो हमें ठीक नहीं लगतीं। मसलन, सभी का एक साथ कॉपी चेक कराने आना। क्योंकि हर बच्चा चाहता है कि शिक्षक उनका काम पहले देखे। शुरुआती कक्षाओं में यह बहुत होता है। लेकिन फिर यह भी कि, शिक्षक भी तो इंसान ही हैं, उनकी भी मानवीय सीमाएँ होती ही हैं। कई बार शिक्षक इन जायज़ कोशिशों से भी परेशान हो सकते हैं, और ऐसे में बच्चों को डाँटना ही एक हल लगता है। लेकिन ज़रूरी यह है, कि हम महसूस कर पाएँ कि यह तरीक़ा सही नहीं है और साथ ही बच्चों के साथ काम करने के नए-नए लोकतांत्रिक तरीक़ों के बारे में सोचते रहें। तभी हम उनको भी यह समझने में मदद कर पाएँगे कि आलोचना और सुधार का उदारात्मक रवैया भी हो सकता है।

मीनू पालीवाल अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में 2017 से काम कर रही हैं। आप फ़ेलोशिप प्रोग्राम के ज़रिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ीं। इससे पहले उन्होंने 6 वर्ष आईसीआईसीआई बैंक में काम किया। वे अपने मन में आने वाले सवालों की तलाश में शिक्षा और शिक्षण प्रक्रिया से जुड़ीं। प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों के साथ काम करना उन्हें अच्छा लगता है।
सम्पर्क : meenu.paliwal@azimpremjifoundation.org